शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 अक्टूबर 2013

बदलती भारतीय जीवन पद्धति में स्त्री स्वातन्त्र्य सशक्तिकरण संपृत्यय : एक विवेचन

डॉ ज्योति सिंह
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)
प.म.ब. गुजराती विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर, भारत

शोध संक्षेप

भारतीय संस्कृति में नारी को प्राचीनकाल में पुरुषों के बराबर सम्मान प्राप्त रहा है। नारी जिन गुणों को धारण करती है उससे समाज व्यवस्था में संतुलन बना रहता है। मध्यकाल में महिला के साथ जो व्यवहार किया गया, उससे भारतीय समाज पतन की ओर अग्रसर हुआ। पुनर्जागरणकाल में नारी को उसका उचित सम्मान देने के लिए अनेक सुधारवादी आंदोलन चले। जिसके परिणामस्वरूप भारतीय समाज में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन दिखाई दिए। वैश्विकरण में प्रवेश करने के साथ पुनः महिलाएं नये संकटों का सामना कर रही हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में इसी की चर्चा की गई हैं।

भूमिका

नारी युगों से धर्म, साहित्य और इतिहास का मूलाधार रही है। भारतीय धर्म संस्कृति में नारी को मातृशक्ति के रूप में पूज्य माना गया है। जगत् का निर्माण पुरुष व प्रकृति के संयोग से ही माना गया है। इन्हीं के मिलन से निखिल गुणों का विस्तार देखने को मिलता है। प्रकृति शक्ति है तो पुरूष शक्तिमान। यदि शक्ति के बिना शक्तिमान की सत्ता नहीं तो शक्तिमान के बिना शक्ति का कोई अस्तित्व नहीं।

नारी की प्रस्थिति के लिए सांस्कृतिक दृष्टि से सर्वोच्च अवधारणाओं एवं संपृत्यों को रखते हुए भी क्यों हर समय स्त्री-पुरूष समानता में एक अंतुलन ही परिलक्षित होता है। भारत में बदलती जीवन पद्धति के कई प्रभावी कारक हैं। जिनमें ज्ञान-विज्ञान, तकनीक-प्रौद्योगिकी, वैश्विकरण - बाजार, बाहरी संस्कृतियों का प्रभाव-आधुनिकता आदि है।

नारी के विभिन्न गुण

आज स्त्री-पुरूष के बीच वैयक्तिक और सामाजिक दोनों स्तर पर परस्स्पर आरोप-प्रत्यारोप की प्रक्रिया चल रही है और असंतुलन की खाई दिनों-दिन बढ़ती जा रही है।

भारत में स्त्री संस्कारशील गुणों के कारण हमेशा शक्ति मानी जा रही है। पुरूष उसका सम्मान करता है, इसलिए उसे 'मेना' कहा गया है। नर की सहयोगिनी होने के कारण वह 'योषा' है। 'वयति सौन्दर्यम' सौन्दर्य को बुनने या बिखेरने के कारण वह 'वामा' है। पुरुष को आह्लादित करने के कारण वह 'प्रमदा' है। 'काम्या' होने के कारण 'कामिनी' है। 'रम्या' होने के कारण रमणी है। सन्तति उत्पन्न करने के कारण वह जननी या 'जाया' है।

तेजस्विनी होने के कारण 'भामा' है। माता-पत्नी, भगिनी, पुत्री, महीयसी सभी रूपों में पूज्य होने के कारण 'महिला' है। पति द्वारा उसका भरण पोषण होता है, इसलिए वह 'भार्या' है। इस तरह इतने सारे विशेषण जो हम प्रयुक्त करते हैं वे स्त्री की बहुआयामी भूमिका को दर्शाते हैं।

वैदिक आर्यों की नारियों की स्थिति वास्तव में सम्मानजनक थी। मार्गी, मैनोयी, विष्पला (योद्धा) शाश्वती, लोपामुद्रा आदि नारियां पुरुषों के समान ही सम्मान की अधिकारिणी थीं। लेकिन देशकाल बदलने के साथ स्त्रियों की स्थिति बदतर होती गयी। उत्तर वैदिक काल की सभी महत्वपूर्ण पौराणिक कृतियों में नारी उत्कर्ष और महत्ता का जो यशोगान मिलता है। उसमें सभी संदर्भो में पुरुष को स्त्री का अभिभावक ही ठहराया गया है। पुरुष द्वारा निर्धारित आदर्श और चौखटे में ही वह श्रेष्ठ और सशक्त है। पुरुष ने धर्म बनाया, समाज बनाया, नीति शास्त्र बनाया, सांस्कृतिक रूप से उसे देवियों की संज्ञाओं में महिमामण्डित कर दिया। शक्ति का संप्रत्य बताया। क्योंकि पुरुष ही नियन्ता और संप्रत्यय निर्माता रहा। जैसे हमारे सोलह संस्कारों में से 'पुंसवन' संस्कार का उद्देश्य पुत्र प्राप्ति हेतु अनुष्ठान ही है। अर्थात पुत्री अभिशाप।

स्त्री स्वातंत्र्य

जब हम अपने सांस्कृतिक आधारों की ऐतिहासिक पौराणिक विवेचना करते हैं तो नारी विषयक परिसस्थितियां पुरुषों द्वारा फैला मायाजाल ही लगता है। इस संदर्भ में नागेन्द्रनाथ मिश्र एवं सुनील कुमार लिखते हैं - जब तक नारी को तुल्य पराक्रम मानव की कोटी नहीं प्राप्त होती। नारी यशगान के लिए नारी मानव की जन्मदात्री तथा जीवनदात्री दोनों है पर ये सभी नारे नारी को मात्र दासी ही बनाते हैं।

वैचारिक धारणाओं के संदर्भ में महिला की स्थिति के संबंध में सशक्तिकरण या स्त्री स्वातन्त्र्य की अवधारणा एक अनिवार्य आवश्याकता है। महिला सशक्तिकरण उत्तर आधुनिक काल की एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। अठारहवीं सदी के नारीवादी दार्शनिक मेरी वाॅलस्वेन क्राफ्ट ने सर्वप्रथम महिला के साथ होने वाले अन्याय व भेदभाव-पूर्ण व्यवहारों पर ध्यान आकृष्ट किया।

वास्तविकता तो यह है कि नारी चाहे वह जिस हद तक सक्षम हो उस पर पुरुष का अभिभावकत्व बना ही रहता है जो नारी की स्वतन्तत्रा को सदैव उत्कंठित किए रहता है।

सिमोन द बोउवा का भी विचार है कि मात्र मतदान व नागरिक अधिकारों से नारी का विकास नहीं होने वाला है। अधिक स्वतंत्रता के अभाव में नारी की स्वतंत्रता सिर्फ अमूर्त व सैद्धांतिक ही रह जाती है। यहां अधिक स्वतंत्रता का तात्पर्य पुरुषों के समान स्वतंत्रता है।

यदि हम एक स्वस्थ समाज की रचना चाहते हैं तो हमें ऐसी स्थितियों तक पहुंचना होगा जहां पुरुष वाद का वर्चस्व हो न ही नारीवाद का संकीर्ण अनुभव। यही स्त्री स्वातन्त्र्य की वास्तविक अवधारणा या सशक्तिकरण का संप्रत्यय है।

यहां हमें इस संप्रत्यय का मूल्यपरक विवेचन भी करना चाहिए। नीतिशास्त्र में गुण (quality) के

आधार पर विचार करने की परंपरा रही है। जो मूल्य विचार या आदर्श हमारे जीवन को अच्छा, बेहतर या श्रेष्ठ बनाते हैं वे किसी भी समाज में शुभ माने जाते है और स्वीकार किये जाते है।

मूल्य के दो रूप होते है - आंतरिक (Intrinsic) मूल्य तथा बाह्य (Extrinsic) मूल्य। इसे क्रमश: (Absolute) मूल्य तथा निमित्त (Intumentel) मूल्य भी कहा जाता है। महिला सशक्तिकरण एक शुभ (Good) यानी नैतिक मूल्य परक चिंतन है।

नारी को सशक्त करना एक श्रेष्ठ मूल्य की स्थापना करने का प्रयास है। जोे एक बाह्य मूल्य (Extrinsic value) के अंतर्गत आता है। सशक्तिकरण एक महत्वपूर्ण उपकरण (Instrumental value) मूल्य के रूप में है। इसलिए समाज में महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया बहुआयामी प्रक्रिया है। जो समाज के कई क्षेत्रों में समान रूप से निरंतर चलनी चाहिए। जैसे -

शिक्षा के क्षेत्र में

आर्थिक क्षेत्र में

राजनीतिक क्षेत्र में

सामाजिक क्षेत्र में

पारिवारिक क्षेत्र में

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे देश के संविधान में महिलाओं के लिए कानून बनाए गए। (स्त्री पुरूष समानता अनुच्छेद-14),1955 के हिंदू विवाह अधिनियम।

1954 के विशेष विवाह अधिनियम,

1956 के पुनर्विवाह अधिनियम,

1956 में हिंदू दत्तक ग्रहण एंव भरण पोषण अधिनियम,

1956 के हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम द्वारा संपति अधिकार,

फैक्ट्री अधिनियम 1948 एंव समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976,

1961 दहेज निषेध एक्ट,

1961 प्रसूति लाभ एक्ट,

1986 अश्लील चित्रण निवारण,

1985 में महिला एंव बाल विकास विभाग की स्थापना की गयी।

31 जनवरी 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन किया गया।

8 मार्च को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाने लगा भारत सरकार द्वारा 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया गया।

मानवाधिकार में भी महिलाओं का पूरा ध्यान रखा गया है। भारत सरकार ने महिलाओं के लिए कई नियम प्रावधानों को अंगीकार किया है लेकिन वास्तव में 16 दिसंबर 2012 को दिल्ली गैंगरेप ने हर एक भारतीय की चेतना को निस्संदेह ही झकझोर दिया जब दामिनी पुरुषों के अत्याचार का षिकार बनी। हमें इस दुर्घटना ने सिरे से सोचने पर मजबूर कर दिया है कि क्या भारत जैसे देश में वैश्विकरण की प्रक्रिया में, बाजार में, गांव में, शहर में स्त्री स्वातन्त्र्य,

अस्तित्व सशक्तिकरण, शिक्षा के क्षेत्र में विकास सभी खोखले नहीं हो गए हैं।

निष्कर्ष

उत्तर आधुनिक इस काल में स्त्री को देह वाद से मुक्ति दिलानी है। उसे आकर्षक छवि के पिंजरे से मुक्त करवाना है। भले ही इसके लिए पुनः क्रांतियाँ हो, आंदोलन हो,संविधान में संशोधन हो या नये कानून बने। साथ ही समतुल्यता के सिद्धांत को मूर्तता प्रदान करनी होगी।

नास्ति चात्समं बलम् अर्थात् अपने पर भरोसा जैसी दुसरी कोई शक्ति नही है।

महिलाओं को चैतन्य हो इस उक्ति को चरितार्थ करना ही होगा। तभी नारी, महिला सही अर्थो में शक्ति का संप्रत्यय बनेगी।

सन्दर्भ

1 मुंशीराम शर्मा, वैदिक संस्कृति और सभ्यता पृ. 10।
2 ऐतरेय ब्राह्मण 6.3.7,13।
3 शतपथ ब्राह्मण 3.2.46।
4 मैत्रेयी संहिता 1.10.11/3.6.3।
5 विनोबा भावे स्त्री शक्ति (प्राक्कथन) पृ. 3-4।
6 नारी शिक्षा एंव सशक्तिकरण सम्पादक चितरंजन ओझा प्रथम संस्करण 2010 पृ. 98 आई.एस.बी.एन-978-81-8484-0575
7 जीनग्रीम शो मेमेनिस्ट फिलासफर्स व्हीट शीट बुक्स लिमिटेड ग्रेट ब्रिटेन 1986-पी 78।
8 सीमोन द वोडवार, स्त्री उपेक्षिता हिंद पाॅकेट बुक्स दिल्ली 2002 पी- 354।
9 नारी शिक्षा एंव सशक्तिकरण संपादक चितरंजन ओझा आई.एस.बी.एन - 9781-8484-057-5 प्रथम संस्करण पृष्ठ 99।